सम्पादक की कलम से

एक देश-एक चुनाव के पर मंथन को फिलहाल तो सभी दलों का समर्थन नहीं मिल रहा है और न ही इस पर आम सहमति ही बन पा रही है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा बुलाई गई सभी दलों बैठक में देश के लोकसभा और विधानसभा चुनाव कराने का प्रस्ताव विपक्ष को रास नहीं आया। कांग्रेस, तृणमूल कांग्रेस, बसपा और डीएमके जैसे बड़े विपक्षी दलों के नेता इस बारे में बुधवार को बुलाई गई सर्वदलीय बैठक से अपने आप को अलग किया वे बैठक में उपस्थित नहीं हुए। बैठक में 24 दलों के नेता या उनके लिखित प्रस्ताव पहुंचे। इनमें भी ज्यादातर सत्ताधारी एनडीए के घटक दल ही थे। हालांकि प्रधानमंत्री की ओर से 40 दलों को न्यौता दिया गया था।

एक देश-एक चुनाव, बेहद अच्छा विचार है। इससे जनधन बचेगा। बार-बार लगाने से आचार संहिता के कारण काम नहीं रुकेगा। सब कुछ सही है, लेकिन न तो इसमें काले धन पर रोक लगेगी और न ही हमारा चुनाव आयोग ऐसा कराने में सक्षम दिखता है या उसमें इसे लागू करने का साहस है। गुजरात में दो राज्यसभा सीटों का चुनाव होना है और चुनाव आयोग इन्हें एक साथ नहीं करवा रहा है। इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने भी चुनाव आयोग से अपना स्पष्टीकरण मांगा है। हाल ही के हमारे सम्पन्न हुए लोकसभा चुनाव की प्रक्रिया को देखिए। लोकसभा चुनाव सात चरणों में और लगभग 38 दिन में हुआ था। जब अकेले लोकसभा चुनाव को इतने दिन लग सकते हैं तो आप खुद ही अंदाजा लगा लें कि लोकसभा और तमाम विधानसभाओं के एक साथ चुनाव में कितने दिन लगेंगे? विधि आयोग के मुताबिक लोकसभा और विधानसभा चुनावों को एक साथ दो चरणों में कराया जा सकता है लेकिन इसके लिए एक कानूनी अड़चन को दूर करना होगा। इसके लिए देश संविधान के कम से कम दो प्रावधानों में संशोधन करना होगा और इसे सभी राज्यों में पूर्ण बहुमत से पास कराना होगा। कानूनी विशेषज्ञों के अनुसार यह सुझाव अच्छा है लेकिन अमल में लाना उतना ही मुश्किल बता रहे हैं। कानूनी विशेषज्ञों की राय से सहमति जताते हुए पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त टीएन कृष्णामूर्ति ने कहा कि एक देश-एक चुनाव का ख्याल लुभावना तो है लेकिन इसको साकार करना ज्यादा मुश्किल होगा। इसके लिए संविधान संशोधन ही एकमात्र रास्ता है। बसपा की प्रमुख मायावती ने कहा कि यह सरकार का नया फंडा है और सिर्फ ध्यान भटकाने के लिए है।

बैठक अगर ईवीएम का मुद्दस होती तो मैं जरूर जाती। समाजवादी पार्टी अध्यक्ष अखिलेश यादव का कहना था कि केन्द्र सरकार पहले लोकसभा चुनाव में जनता से किए गए वादे पूरे करे, इसके बाद अन्य मुद्दों में उलझे। कांग्रेस ने कहा है कि अगर सरकार चुनाव सुधारों पर कोई कदम उठाना चाहती है तो वह पहले संसद में चर्चा कराए। कांग्रेस ने भाजपा पर दोहरा मापदंड अपनाने का भी आरोप लगाया। सीपीएम नेता सीताराम येचुरी ने कहा—यह विचार असंवैधानिक और संघीय व्यवस्था के खिलाफ है, यह संसदीय सिस्टम की जगह राष्ट्रपति शासन लाने की कोशिश है। दूसरी ओर सरकार के पक्ष की दलीलों को नकारा भी नहीं जा सकता। अभी हर साल पांच-सात राज्यों में विधानसभा चुनाव होते हैं। अगर लोकसभा-विधानसभा चुनाव साथ हों तो सरकार का चुनाव खर्च एक-चौथाई रह जाएगा। हर साल सरकारी कर्मचारियों और सुरक्षाबलों को अलग-अलग राज्यों में चुनाव के लिए तैनात करना पड़ता है। ऐसा करने से बचा जा सकेगा। वे नियमित काम सही से कर पाएंगे। चुनाव के लिए बार-बार आदर्श आचार संहिता लागू नहीं करनी पड़ेगी। नीतिगत पैसले लिए जा सवेंगे। कहीं भी विकास कार्य प्राभावित नहीं होंगे। काले धन पर भी रोक लगेगी, क्योंकि चुनाव के दौरान काले धन का इस्तेमाल खुलेआम देखा गया है। हमें लगता है कि हाल की परिस्थितियों में एक देश-एक चुनाव संभव नहीं लगता। संभव बनाया भी जाता है तो वुछ सालों बाद ही ऐसी स्थिति बनेगी। इस मुद्दे पर अभी आगे गंभीरता से विचार करना होगा। विपक्ष की आपत्तियों को समझना होगा और आम सहमति बनानी होगी।

क्यों यह दुनिया बेटियों के लिए लगातार असुरक्षित होती जा रही है ?

बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ का नारा जब हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने दिया होगा, तब शायद वे कोख में मारी जानी वाली बेटियों की चिंता कर रहे थे। हमारे समय के एक बड़े संकट भ्रुण हत्या पर उनका संकेत था। लेकिन अब इस नारे के अर्थ बदलने से लगे हैं। छोटी बच्चियों के साथ निरंतर हो रही आपराधिक घटनाएं हमारे समाज के माथे पर कलंक ही हैं। यह दुनिया बेटियों के लिए लगातार असुरक्षित होती जा रही है और हमारे हाथ बंधे हुए से लगते हैं। कोई समाज अगर अपनी संततियों की सुरक्षा भी नहीं कर सकता, उनके बचपन को सुरक्षित और संरक्षित नहीं रख सकता तो यह मान लेना चाहिए सडांध बहुत गहरी है। ऐसे समाज का या तो दार्शनिक आधार दरक चुका है या वह सिर्फ एक पाखंडपूर्ण समाज बनकर रह गया है जो बातें तो बड़ी-बड़ी करता है, किंतु उसका आचरण बहुत घटिया है।

स्त्रियों की तरफ देखने का हमारा नजरिया, उनके साथ बरताव करने का रवैया बताता है कि हालात अच्छे नहीं हैं। किंतु चिंता तब और बढ़ जाती है, जब निशाने पर मासूम हों। जिन्होंने अभी-अभी होश संभाला है, दुनिया को देख रहे हैं। परख रहे हैं। समझ रहे हैं। उनके अपने परिचितों, दोस्तों, परिजनों के हाथों किए जा रहे ये हादसे बता रहे हैं कि हम कितने सड़े हुए समाज में रह रहे हैं। हमारी सारी चमकीली प्रगति के मोल क्या हैं, अगर हम अपने बच्चों के खेल के मैदानों में, पास-पड़ोस में जाने से भी सहमने लगें। किंतु ऐसा हो रहा है और हम सहमे हुए हैं। बेटियां जिनकी मौजूदगी से यह दुनिया इतनी सुंदर है, वहशी दरिंदों के निशाने पर हैं।

कानूनों से क्या होगा: बच्चों और स्त्रियों की सुरक्षा को लेकर कानूनों की कमी नहीं है। किंतु उन्हें लागू करने, एक न्यायपूर्ण समाज बनाने की प्रक्रिया में हम विफल जरूर हुए हैं। इन घटनाओं के चलते पुलिस, सरकार और समाज सबका विवेक तथा संवेदनशीलता कसौटी पर है। निर्भया कांड के बाद समाज की आई जागरूकता और सरकार पर बने दबावों का भी हम सही दोहन नहीं कर सके। कम समय में न्याय, संवेदनशील पुलिसिंग और समाज में व्यापक जागरूकता के बिना इन सवालों से जूझा नहीं जा सकता। हमारी 'परिवार' नाम की संस्था जो पारिवारिक और सामाजिक मूल्यों की स्थापना का मूल स्थान था, पूरी तरह दरक चुकी है। पैसा इस वक्त की सबसे बड़ी ताकत है और जायज-नाजायज पैसे का अंतर खत्म हो चुका है। माता-पिता की व्यस्तताएं, उनकी परिवार चलाने और संसाधन जुटाने की जद्दोजहद में सबसे उपेक्षित तो बच्चा ही हो रहा है।

सोशल मीडिया ने इस संवादहीनता के नरक को और चौड़ा किया है। संयुक्त परिवारों की टूटन तो एक सवाल है ही। ऐसे कठिन समय में हमारे बच्चे क्या करें और कहां जाएं ? अवसरों से भरी पूरी दुनिया में जब वे पैदा हुए हैं, तो उनका सुरक्षित रहना एक दूसरी चुनौती बन गया है। भारतीय परिवार व्यवस्था पूरी दुनिया में विस्मय और उदाहरण का विषय रही है, किंतु इसके बिखराव और एकल परिवारों ने बच्चों को बेहद अकेला छोड़ दिया है।

स्कूल निभाएं जिम्मेदारी: ऐसे समय में जब परिवार बिखर चुके हैं, समाज की शक्तियां अपने वास्तविक स्वरूप में निष्क्रिय हैं, हमारे विद्यालयों, स्वयंसेवी संगठनों को आगे आना होगा। एक आर्थिक रूप से निर्भर समाज बनाने के साथ-साथ हमें एक नैतिक, संवेदनशील और परदुखकातर समाज भी बनाना होगा। संवेदना का विस्तार परिवार से लेकर समाज तक फैलेगा तो समाज के तमाम कष्ट कम होंगे। शिक्षक और सामाजिक कार्यकर्ता इस काम में बड़ा योगदान दे सकते हैं। सही मायने में हमें कई स्तरों पर काम करने की जरूरत है, जिसमें परिवारों और स्कूलों दोनों पर फोकस करना होगा।

परिवार और स्कूलों में नई पीढ़ी को संस्कार, सहअस्तित्व, परस्पर सम्मान और शुचिता के संस्कार देने होंगे। स्त्री-पुरुष में कोई छोटा-बड़ा नहीं, कोई खास और कोई कमतर नहीं यह भावनाएं बचपन से बिठानी होंगी। पशुता और मनोविकार के लक्षण हमारी परवरिश, पढ़ाई-लिखाई और समाज में चल रहीं हलचलों से ही उपजते हैं। मोबाइल और मीडिया के तमाम माध्यमों पर उपलब्ध अश्लील और पोर्न सामग्री इसमें उत्प्रेरक की भूमिका निभा रहे हैं। इसके साथ ही समाज में बंटवारे की भावनाएं इतनी गहरी हो रही हैं कि हम स्त्री के विरुद्ध अपराध को पंथों को हिसाब से देख रहे हैं। निर्मम हत्याएं, दुराचार की घटनाएं मानवता के विरुद्ध हैं। पूरे समाज के लिए कलंक हैं। इन घटनाओं पर भी हम अपनी घटिया राजनीति और पंथिक मानसिकता से ग्रस्त होकर टिप्पणी कर रहे हैं। दुनिया के हर हिस्से में हो रहे हमलों, युद्धों, दंगों और आपसी पारिवारिक लड़ाई में भी स्त्री को ही कमजोर मानकर निशाना बनाया जाता है। यह बीमार सोच और मनोरोगी समाज के लक्षण हैं।

पाखंडपूर्ण समाज और शुतुरमुर्गी सोच: समाज की पाखंडपूर्ण प्रवृत्ति और शुतुरमुर्गी रवैया ऐसे सामाजिक संकटों में साफ दिखता है। साल में दो नवरात्रि पर कन्यापूजन कर बालिकाओं का आशीष लेने वाला समाज, उसी कन्या के लिए जीने लायक हालात नहीं रहने दे रहा है। संकटों से जूझने, दो-दो हाथ करने और समाधान निकालने की हमारी मानसिकता और तैयारी दोनों नहीं है। अलीगढ़, भोपाल से लेकर उज्जैन तक जो कुछ हुआ है, वह बताता है कि हमारा समाज किस गर्त में जा रहा है। हमारी परिवार व्यवस्था, शिक्षा व्यवस्था, समाज व्यवस्था, धर्म सत्ता सब सवालों के घेरे में है। हमारा नैतिक पक्ष, दार्शनिक पक्ष चकनाचूर हो चुका है। हम एक स्वार्थी, व्यक्तिवादी समाज बना रहे हैं, जिसमें पति-पत्नी और बच्चों के अलावा कोई नहीं है। विश्वास का यह संकट दिनों दिन गहरा होता जा रहा है। शायद इसीलिए हमें परिजनों और पड़ोसियों से ज्यादा हिडेन कैमरों और सर्विलेंस के साधनों पर भरोसा ज्यादा है। भरोसे के दरकने का यह संकट दरअसल संवेदना के छीज जाने का भी संकट है।

कैसे बचेंगी बेटिया: बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ का नारा जब हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने दिया होगा, तब शायद वे कोख में मारी जानी वाली बेटियों की चिंता कर रहे थे। हमारे समय के एक बड़े संकट भ्रुण हत्या पर उनका संकेत था। लेकिन अब इस नारे के अर्थ बदलने से लगे हैं। लगता है कि अब दुनिया में आ चुकी बेटियों को बचाने के लिए हमें नए नारे देने होगें। एक बेहतर दुनिया किसी भी सभ्य समाज का सपना है। हमारी संस्कृति और परंपरा ने हमें स्त्री के पूजन का पाठ सिखाया है। हम कहते रहे हैं- 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' (जहां नारियों की पूजा होता है, वहां देवता वास करते हैं)। हमारी बुद्धि, शक्ति और धन की अधिष्ठात्री भी सरस्वती, दुर्गा-काली और लक्ष्मी जैसी देवियां हैं। बावजूद इसके उन्हें पूजने वाली धरती पर बालिकाओं का जीवन इतना कठिन क्यों हो गया है ? यह सवाल हमारे समाने है, हम सबके सामने, पूरे समाज के सामने। हादसे की शिकार बेटियों की चीख हमने आज नहीं सुनी तो मानवता के सामने हम सब अपराधी होंगे, यकीन मानिए।